International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 11-04-2019; Accepted: 14-05-2019
www.hindijournal.com
Volume 5; Issue 4; July 2019; Page No. 82-84

प्रदर्शनकारी कला (फ़िल्म एवं थियेटर) : वर्तमान परिदृश्य और शैक्षणिक विस्तार

अभिषेक त्रिपाठी

पीएच॰ डी॰ शोधार्थी, प्रदर्शनकारी कला विभाग (फ़िल्म एवं थियेटर), महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र, भारत।

सारांश

प्रदर्शनकारी कला (फ़िल्म एवं थियेटर) अब तक की अपनी विकास यात्रा में अनेक पड़ावों से होकर गुजरी है, और अब भी निरंतर अपने यात्रा पथ पर गतिशील है। इस यात्रा के परिणामतः इसके रूप-स्वरूप और स्वीकृति की सीमाओं में काफी कुछ परिवर्तित हुआ है। कभी कला सिर्फ कला के लिए थी; इसका सिर्फ आनंददायी रूप ही सर्वोपरि था। कालांतर में कलाओं के इस सीमा को विस्तृत कर इसे समाज के लिए एक जिम्मेदार कारक की भूमिका भी प्रदान कर दी गई। आज कला इससे भी आगे बढ़कर ज्ञान-विज्ञान के संप्रेषण का भी एक सशक्त जरिया बन रही है, और इसके जरिये अध्ययन-अध्यापन का कार्य संपन्न किया जा रहा है। अध्ययन के विषय-विशेष के रूप में तो यह अस्तित्व कायम किए हुये है ही, इससे आगे बढ़कर यह अन्य विषयों के संबंध मे आसान समझ बनाने का भी एक जरिया बन चुकी है। प्रदर्शनकारी कला की सहायता से अन्य अनुशासनों की समझ भी विद्यार्थियों को दी जा रही है। अपने यात्रा के दौर में वर्तमान में प्रदर्शनकारी कला (फ़िल्म एवं थियेटर) में तमाम तरह के बदलावों को भी चिन्हित किया जा सकता है। तकनीकी की पैठ इनका वर्तमान यथार्थ है। बात चाहे थियेटर की करें, या फ़िल्म की; प्रत्येक स्थल पर तकनीकी अपनी महत्ता स्थापित कर रही है। फ़िल्म तो मूलतः तकनीकी की विधा है, और इस कारण इसमें नई-नई तकनीकें निरंतर शामिल हो ही रही हैं, पर रंगमंच भी इसमें प्रयोग को लेकर तत्पर है। तकनीकी के अतिरिक्त अन्य दूसरे प्रयोग भी इन कला विधाओं में देखे जा सकते हैं। इस अध्ययन में प्रदर्शनकारी कला (फ़िल्म एवं थियेटर) के वर्तमान परिदृश्यों (बदलावों के संबंध में) को समझते हुये वर्तमान समय में इसके एक अति महत्वपूर्ण आयाम शिक्षा; तथा शिक्षण के साधन के रूप में इसकी उपयोगिकता की विवेचना की गई है।

मूल शब्द : प्रदर्शनकारी कला, फ़िल्म, थियेटर, वर्तमान परिदृश्य, विस्तार।

प्रस्तावना

तेजी से बदलते इस दौर में ज्ञान-विज्ञान, कला, संस्कृति प्रत्येक क्षेत्र प्रभावित हुआ है। जीवन और उससे जुड़े प्रत्येक पक्ष के प्रति लोगों की धारणा ने व्यापक विस्तार लिया है। अब हर क्षेत्र को नई-नई दृष्टियों से देखने-समझने और व्याख्यायित करने की चेष्टा हो रही है। अध्ययन-अध्यापन के नए क्षेत्रों का विस्तार, अंतरानुशासनिक दृष्टि, नई-नई संभावनाओं की तलाश, आज की सुखद हकीकत है। तकनीकी के विस्तार ने भी इसमें अहम भूमिका अदा की है। जीवन के प्रत्येक फलक पर तकनीकी का हस्तक्षेप बढ़ा है। पहले के समय और आज के समय में काफी अंतर चिन्हित किया जा सकता है। पहले जहाँ मनुष्य आधुनिक तकनीकी से कोसों दूर था, आज प्रत्येक मनुष्य के हाथ में तकनीकी का अस्त्र है। हर मनुष्य तकनीकी के साथ संगति बैठा चुका है, और उसी के मुताबिक जीवन जी रहा है।

प्रदर्शनकारी कला की बात करें तो ये वे कलाएं हैं जो जीवंतता के साथ मंच या किसी उपयुक्त स्थल पर प्रदर्शित की जाती हैं, और दर्शक उसका रसास्वादन करते हैं। नृत्य, संगीत, नाट्य आदि इसमें शामिल हैं। इन कलाओं की गहराई और व्यापकता इन्हें अलग ही अर्थ देती हैं। ये मनुष्य की संवेदना से संबद्ध होती हैं। इसमें मनुष्य की वैयक्तिकता तिरोहित होती है और सामूहिकता प्रबल हो जाती है। कला समाज की गति और विकास प्रक्रिया से प्रभावित होती है। कला समाज से निरपेक्ष नहीं है। समाज के विकास और उत्थान में ही कलाओं का विकास एवं उत्थान अंतर्निहित है। समाज के विभिन्न पक्षों में हो रहे बदलाव का असर कला रूपों पर भी देखा जा सकता है। पहले अप्रतिम गुणवत्ता के बाद भी विभिन्न कलाओं का दायरा सीमित था; अब कलाओं ने भी विस्तार लिया है। कलाएँ अब केवल एकांतिक साधना और उसके आस्वादन में तत्पर सहृदयी लोगों तक ही सीमित नहीं है; अपितु इसका विस्तार अनेक आधुनिक माध्यमों के द्वारा विस्तृत क्षेत्रों तक अलग-अलग दायरों में हो रहा है।

प्रदर्शनकारी कला के समुच्चय के रूप में रंगमंच (नाट्यकला) को देखा जा सकता है। यह एक ऐसी विधा है, जिसमें सभी कला रूप शामिल हैं। नेमिचन्द्र जैन इस संबंध में ठीक ही लिखते हैं- "भारतीय नाट्यकला विशेषतः टोटल थियेटर है; इसमें काव्य, संगीत, नृत्य, अभिनय, चित्र, मूर्ति, वास्तु आदि सभी कलाओं का समायोजन है।" रंगमंच (नाट्यकला) कलाओं का एक विस्तृत रूप है। रंगमंच के धरातल पर ये सभी रूप आवश्यकतानुसार अभिव्यक्ति पाते हैं। रंगमंच की अवधारणा नाटकों के मंचीय निरूपण से जुड़ती है; इसमें नाट्य कथ्य एवं भाव, अभिनेताओं के आंगिक, वाचिक, आहार्य एवं सात्विक अभिनय तथा दृश्य विन्यास, मंच सज्जा, प्रकाश, संगीत संयोजन आदि द्वारा संयुक्त रूप से फलीभूत होते हैं। रंगमंच में स्टेज अर्थात मंच की अवधारणा मूल में होती है, जहाँ नाटकीय कार्य-व्यापार घटित होता है। रंगमंच का यह पक्ष समय के साथ बदलता रहा है। इसे इन रूपों में देखा जा सकता है- प्रोसीनियम रंगमंच, अखाड़ा मंच, जिव्हाकर मंच, मुक्ताकाशी मंच आदि।

'नाट्य मानव की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति की अत्यंत प्राचीन काल से क्रियाशील संस्था है और उसके सांस्कृतिक विकास-परिवर्तनों के साथ वह भी विकसित, परिवर्तित होती गई है।' इस संबंध में आज नाट्य के बहुविध आयामों को देखा जा सकता है; नाट्य के विविध पक्षों, उसके प्रदर्शनों आदि में नए-नए परिवर्तन शामिल होते चले जा रहे हैं। रंगमंच में प्रयोग और

बदलाव की धारा न सिर्फ उसके प्रस्तुति स्थल पर, अपितु हर एक पक्ष से मुखर हो रही है। आज इसके प्रत्येक अंश में प्रयोगों की अनगिनत रेखाएँ समाहित हैं। वर्तमान में कथ्य, प्रस्तुति और तकनीकी के स्तर पर तमाम तरह के प्रयोग किए जा रहे हैं। पहले जहाँ नाट्य प्रदर्शनों में स्टेज डिजाइनिंग की बहुत महत्ता नहीं थी, आजादी के बाद उसको लेकर नए-नए दृष्टिकोणों का सूत्रपात हुआ। 'आजादी के बाद जब रंगमंच में औपचारिक प्रशिक्षण की जरूरत महसूस हुई, तो सीन डिजाइनिंग नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा में पढ़ाया जाने लगा।' प्रयोगों की अनगिनत धारायें नाट्य एवं अन्य प्रदर्शनकारी कलाओं का वर्तमान यथार्थ है। दृश्य विन्यास, प्रकाश, संगीत को लेकर नानाविध किस्म के प्रयोग आज के बहुधा प्रदर्शनों में द्रष्टव्य हैं। वैकल्पिक मंच और प्रस्तुति को भी प्रधानता दी जा रही है; नुक्कड़ नाटक आदि इसी रूप में देखे-समझे जा सकते हैं। 'हिंदी नाटक और रंगमंच की नई दिशाओं और संभावनाओं को उजागर करने, नाट्य लेखन के संघर्षों, सीमाओं और उपलब्धियों को विस्तार देने में नए नाटककारों एवं रंगप्रयोक्ताओं के योगदान उल्लेखनीय हैं।'

समसामयिक समय में मंचन, प्रदर्शन के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में भी कलाओं की पैठ बढ़ी है; इसका सीमा विस्तार हुआ है। कलाओं के प्रति लोगों की दृष्टि में भी आमूल चूल परिवर्तन हुआ है; यही कारण है कि अब कलाएँ अपने परंपरागत शिक्षण-प्रशिक्षण के रूप से बाहर निकलकर औपचारिक शिक्षा का हिस्सा तक बन चुकी हैं। जो कलाएँ पहले गुरु-शिष्य परंपरा में आगे बढ़ती थीं, उनका तो शैक्षणिक संस्थानों में शिक्षण-प्रशिक्षण हो ही रहा है; इसके अतिरिक्त अन्य कला माध्यम जिनके शिक्षण-प्रशिक्षण का कोई भी औपचारिक-अनौपचारिक ढांचा पूर्व समय में मौजूद नहीं था, उनके भी शिक्षण-प्रशिक्षण की औपचारिक और क्रमबद्ध व्यवस्था अब हमारे सामने है। इस दृष्टि से रंगमंच और फिल्मों की चर्चा की जा सकती है। देश के अनेक हिस्सों में अनेक स्तरीय शैक्षणिक शिक्षण संस्थाओं में नाट्य, रंगमंच और फिल्मों को केंद्र में रखकर शैक्षणिक गतिविधियाँ संचालित हैं और अब धीरे-धीरे ही सही अध्यापक-विद्यार्थी मुख्य धारा के शैक्षणिक विषयों के रूप में इसे भी स्वीकार करने लगे हैं।

कलाएं विधिवत रूप में स्कूल, कॉलेज और विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों में अपने विस्तृत आयामों के साथ शामिल हैं। राष्ट्रीय महत्व के अनेक संस्थानों में कलाओं की शिक्षा दी जा रही है। बहुत से प्रशिक्षण संस्थान कलाओं के क्षेत्र में विद्यार्थियों को प्रशिक्षित कर रहे हैं। वर्तमान में राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, दिल्ली; भारतीय फिल्म एवं टेलीविजन संस्थान, पुणे, महाराष्ट्र; भारतीय फिल्म एवं टेलीविजन संस्थान, कोलकाता, पश्चिम बंगाल; महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र; विश्वभारती विश्वविद्यालय, कोलकाता, पश्चिम बंगाल; हैदराबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय, हैदराबाद, तेलंगाना; राजा मान सिंह तोमर विश्वविद्यालय, ग्वालियर, मध्य प्रदेश आदि में नाट्य, रंगमंच, फिल्म आदि का शिक्षण-प्रशिक्षण हो रहा है। इन विषयों को भी अब विद्यार्थियों द्वारा मुख्य धारा के विषय के रूप में देखा-समझा जाने लगा है और इनका शिक्षण-प्रशिक्षण अलग से स्थापित किसी विद्यालय-विश्वविद्यालय में नहीं अपितु मुख्य धारा के शिक्षण संस्थानों में मुख्य धारा के विषयों के समानांतर ही हो रहा है।

प्रदर्शनकारी कलाओं को अब अन्य विषयों के शिक्षण के माध्यम के रूप मे भी देखा-समझा और उपयोग में लाया जा रहा है। इसी निमित्त एनसीटी (नेशनल काउंसिल ऑफ टीचर्स ट्रेनिंग) ने शिक्षण प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों में प्रदर्शनकारी कला की शिक्षा अनिवार्य कर दी है। बी.एड. पाठ्यक्रम में एक विषय के रूप में प्रदर्शनकारी कला का अध्ययन अनिवार्य है। इस कदम का मुख्य उद्देश्य भावी अध्यापकों को प्रदर्शनकारी कलाओं के उपयोग द्वारा बच्चों को सहजता, सरलता और रचनात्मकता के साथ ज्ञान-विज्ञान और जीवनानुभवों से जोड़ना है। 'शिक्षा बिना बोझ के' इस अवधारणा को व्यावहारिक जामा पहनाने में प्रदर्शनकारी कला की शिक्षा महती भूमिका अदा कर सकती है। बच्चों को प्रदर्शनकारी कला की शिक्षा दो रूपों में दी जा रही है- प्रथम, विविध कलाओं को स्वतंत्र रूप में एक विषय के रूप में रखकर, द्वितीय इन कलाओं की सहायता से अन्य विषयों को सीखने में मदद देकर। इस समस्त आयोजनों का उद्देश्य बच्चों को सीखने-सिखाने के हेतु एक ऐसे माहौल का सृजन है, जहाँ बच्चे दबाव मुक्त होकर आनंद के साथ निर्भय होकर ज्ञानार्जन करें।

आज के समय में शिक्षाविदों द्वारा बार-बार इस बात पर जोर दिया जा रहा है कि बालक शिक्षा हेतु ऐसे रचनात्मक माध्यमों का इस्तेमाल किया जाये, जिससे बच्चों को ज्ञान-विज्ञान से जुड़ते समय किसी तरह के दबाव का सामना न करना पड़े, और वे खेल-खेल में आसानी और सरलता के साथ स्थायी रूप में ज्ञान और तथ्यों को ग्रहण कर सकें। बालक शिक्षा को ज्यादा रचनात्मक और प्रभावी बनाने के लिए प्रदर्शनकारी कला को एक सशक्त तकनीकी के रूप में स्थापित किया जा चुका है। मनोवैज्ञानिकों की मान्यता है कि बच्चों के मानस पर अक्षरों, शब्दों की बजाय दृश्यों का गहरा प्रभाव पड़ता है, और इसे बच्चे अपने मानस में चिरकाल तक संचित रखने में कामयाब हो पाते हैं।

बहुत से जटिल विषयों को भी फिल्म एवं अन्य कलात्मक विधाओं के माध्यम से बहुत ही प्रभावी रूप से लोगों के बीच संप्रेषित किया जा सकता है। प्रदर्शनकारी कलाओं की इस ताकत को विशेषज्ञों ने समझा और यही कारण है कि इन माध्यमों के शिक्षण-प्रशिक्षण के अलावा इन्हें स्वयं में एक टूल के रूप में भी सशक्त करने की कोशिश हो रही है, और इसका दखल सभी विषयों में माना जाने लगा है। फिल्म, प्रदर्शनकारी कला से न केवल सामान्य समाज विज्ञान, अपितु अन्य जटिल विषयों विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान के संबंध में भी ज्ञान संप्रेषण संभव है। बहुत सी फिल्में (डॉक्युमेंट्री आदि) विशुद्ध रूप से विषय विशेष के संबंध में विवरण रूप में ही होती हैं, और इन्हें देख-समझकर बहुत कुछ सीखा जा सकता है। इनका इस्तेमाल बच्चों से आगे बढ़कर बड़ों तक भी ज्ञान को संप्रेषित करने में प्रभावी रूप से किया जा सकता है।

फ़िल्म एवं प्रदर्शनकारी कला की कलात्मकता, उसमें अभिव्याप्त सौंदर्य, दर्शकों को अपनी ओर खींचने की उसकी ताकत और उसका मनोरम रूप लोगों के चित्त पर अनायास अंकित होता है। यह माध्यम बिना किसी जोर के गहराई तक संपर्क सूत्र जोड़ लेता है। यही कारण है कि इस विधा को अब नए दृष्टिकोण से देखा जाने लगा है। यद्यपि इसका आकाश अनंत है और इस पर और चिंतन-मनन और इसे और सशक्त रूप में इस्तेमाल करने की आवश्यकता है ताकि प्रदर्शनकारी कलाओं के साथ अन्य ज्ञानानुशासनों का भविष्य और उज्जवल हो।

फ़िल्म एवं प्रदर्शनकारी कलाओं की महत्ता सिर्फ इस हेतु नहीं है कि यह मनुष्यों के मनोरंजन का एक साधन है, अपितु यह लोगों के सांस्कृतिक जीवन से भी संबंधित है। इस स्थिति के सृजन में नाट्यशास्त्र की महती भूमिका रही है। इस संबंध मे आद्य रंगाचार्य ठीक ही लिखते हैं- "नाट्य शास्त्र ने भारतीय नाटक को एक रूप या लक्ष्य दिया, बल्कि लोगों के सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में नाटक का एक निश्चित स्थान निर्धारित करने का श्रेय भी इसे है।"

वर्तमान समय में रंगमंच के साथ सिनेमा में भी आमूल चूल परिवर्तन देखा जा सकता है। सिनेमा की तकनीकी में नित सुधार हो रहा है। 3-डी जैसी टकनीकी आज के समय में आम बात हो गई है। अपने तकनीकी समृद्धि के

साथ सिनेमा ने अपने दायरे को भी विस्तार दिया है। सिनेमा अब नए-नए माध्यमों के जरिये दर्शकों तक पहुँच रही है। टेलीविजन ने फिल्म की सीमा को दशकों पहले विस्तार दे दिया था; अब इन्टरनेट इसे और आगे पहुँचा रहा है। फिल्में अब केवल मल्टीप्लेक्स में नहीं, हर घर के अंदर और लोगों की जेब मे रखे मोबाइल फोन में हैं। फिल्मों की इस व्यापक पहुँच ने फिल्मों की अनंत संप्रेषणीयता और प्रभाव की अनवरत पुष्टि की है।

इंटरनेट ने उभरते हुये फ़िल्म मेकर्स को स्वयं को साबित करने का एक नया मौका उपलब्ध कराया है। तकनीकी दक्षता तक सबकी पैठ बढ़ी है और फ़िल्म निर्माण को लेकर समूह विशेष का एकाधिकार टूट रहा है। तमाम सामाजिक, राजनैतिक, पर्यावरणीय, जल संरक्षण, वैश्विक ताप, मानव अधिकार आदि विषयों पर स्कूल-कॉलेज के विद्यार्थी आगे बढ़-बढ़कर गुणवत्तापूर्ण फिल्में बना रहे हैं। सिनेमा से जुड़े कुछ लोग सिनेमा की महत्ता और ताकत को समझ रहे हैं, और इसका सकारात्मक इस्तेमाल कर रहे हैं। 'सिनेमा का जन्म सिर्फ मनोरंजन परोसकर पैसे कमाने के लिए नहीं हुआ है। सदा से सिनेमा के मजबूत कंधों पर देश-काल और सामाजिक दायित्व का दोहरा बोझ भी हुआ करता है।' समय के साथ फिल्मों ने तमाम नकारात्मकताओं के बाद भी कम मात्रा में ही सही अपनी इस जिम्मेदारी का भी निर्वाह किया है। बहुत सी फिल्में ऐसी बनी हैं, जो समाज को अपने मनोरंजनात्मक रूप में भी एक गंभीर पुस्तक का ज्ञान सौंप देती हैं। 'फिल्मों ने न केवल हमें मनोरंजन दिया है बल्कि इसके साथ-साथ कौमी-एकता, सौहार्द्र, मधुर गीत, देश-विदेश की मनोरम दृश्यावली, ज्ञान, शिक्षा, सद्भाव आदि का भी संदेश दिया है।'

प्रदर्शनकारी कला विशेषतः रंगमंच और फिल्मों के वर्तमान परिदृश्य और विस्तार का मूल्यांकन करने पर एक सुखद तस्वीर सामने आती दिखाई पड़ती है; यद्यपि यह यात्रा का आरंभ है, और कलाओं के उत्थान के साथ सभ्यता के बेहतरी के लिए अभी लंबी यात्रा अपेक्षित है, तथापि यह सुखद है कि इन कला माध्यमों ने अपने अंदर तमाम परिवर्तनों के साथ अपनी शैक्षणिक महत्ता और गुणवत्ता को भी स्थापित कर लिया है।

संदर्भ सूची

1. अग्रवाल, कुँवरजी. आधुनिक नाटक का अन्वेषण. दिल्ली: मोतीलाल बनारसी दास, 1986.
2. चतुर्वेदी, रवि. (2001). दृश्य विन्यास. जयपुर: पब्लिकेशन स्कीम.
3. रंगाचार्य, आद्य. भारतीय रंगमंच. नई दिल्ली : नेशनल बुक ट्रस्ट, 1971.
4. लवलीन, लव कुमार. समकालीन रंगधर्मी नाटककार. कानपुर : विकास प्रकाशन, 2010.
5. सिन्हा, प्रसून. भारतीय सिनेमा... एक अनंत यात्रा. दिल्ली : श्री नटराज प्रकाशन, 2006.
6. दिलचस्प. हिन्दी सिनेमा के 100 वर्ष. नई दिल्ली : भारतीय पुस्तक परिषद, 2009.
7. जैन, नेमिचन्द्र. दृश्य अदृश्य. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 1994.
8. लमही, जुलाई-सितंबर, 2010.